• विद्या, वीरता, बुध्दी, साहस, शक्ति और धैर्य - ये सभी गुण मनुष्य के सच्चे और स्वभाविक मित्र होते हैं अतः इनका साथ कभी नही छोड़ना चाहिये क्योंकि यदि इनको साथ रखा जायें और इनसे मदद ली जाऐं तो मनुष्य आपातकाल में भी मुसीबतों का सामना कर सकता हैं और विपति को दूर भगा सकता हैं । ये सभी मित्र आपातकाल में सच्चे सहयोगी सिध्द होते हैं । जो इनका साथ नही छोड़ता वह कभी भी असफल नही होता ।

• संसार में प्रमुख सुख सात माने गये हैं । पहला सुख निरोगी काया होना, दूसरा सुख पर्याप्त आय होना, तीसरा सुख मधुर भाषिणी पतिव्रता पत्नी, चौथा सुख आज्ञाकारी बुध्दीमान पुत्र, पॉचंवा सुख अच्छी विद्या का ज्ञान होना, छठा सुख अच्छा आवास और सांतवा सुख अच्छे लोगो का साथ मिलना - ये सांतो सुख शुभ कार्य करने वाले को ही उपलब्ध होते हैं इसलिये परोपकार और शुभ कर्म करना चाहिये ।

• सत्य जिनका मन हैं, तप जिनकी आत्मा हैं, विद्या जिनकी वाणी हैं, ज्ञान जिनका कर्म हैं, दया जिनका धर्म हैं, सेवा जिनकी माता हैं और धर्म जिनका पिता हैं, सहयोग जिनका भाई हैं, भाग्य जिनका साथी हैं और शांती जिनकी पत्नी हैं, पुरूषार्थ जिनका पुत्र हैं और धैर्य जिनका मित्र हैं, साहस जिनका शस्त्र हैं तथा प्रभु भक्ति जिनका जीवन हैं ऐसे महापुरूष विरले ही होते हैं । इन गुणों के बिना मनुष्य हुऐ भी तो क्या, जिये भी तो क्या ?

• पाप-पुण्य, शुभ अशुभ की बड़ी लंम्बी और गहरी परिभाषाऐं की गई हैं पर सरल परिभाषा यही हैं कि जिस काम को करने में भय, शंका और लज्जा का अनुभव हो उसे अशुभ समझो और मत करों । जिस काम को करने में आनंद, उत्साह और प्रीती का अनुभव हो उस काम को शुभ समझों और ऐसे ही काम करों । इस प्रकार अन्तरात्मा की आवाज को सुनकर स्वंय निर्णय कर लेना चाहिये । अन्तरात्मा की आवाज अशुभ नही होती ।

• जो सदैव अच्छी संगति में रहते हैं, दूसरो के सदगुणों से प्रीती रखते हैं, अपने से बड़ो के प्रति आदर, समान आयु वालो के प्रति स्नेह और छोटों के प्रति करूणा का भाव रखते हैं, जो विद्या का व्यसन, अपनी ही स्त्री में रति, लोक लाज का मान और दुष्ट संगति का त्याग रखते हैं, मन को वश में करने की शक्ति और ईश्वर के प्रति भक्ति रखते हैं, आपातकाल में धैर्य, बलवान और समर्थ होकर क्षमाभाव और बालने में वाकचातुर्य तथा माधुर्य रखते हैं ऐसे सज्जन पुरूष इस मृत्यु लोक में देवता ही हैं ।

• जिनके हृदय में करूणा और दया भाव नही हैं, जो बिना करूणा के भी द्वेष रखते हैं, जो झगड़े के लिये बहाना ढूढंते हैं, पराये धन और परस्त्री पर मन रखते हैं, जो भले लोगों और सगे संबंधियों की उन्नति देखकर कुढ़ते हैं, जो भाई बन्धुओं को खुशहाल देखकर खुश नही होते, जरा सी सपन्नता मिलते ही जिनकी नजरें और चाल ढाल बदल जाती हैं और इतराने लगते हैं, जो न स्वंय सुख से रहते हैं और ना ही दूसरों को रहने देते हैं ऐसे दुष्ट प्रकृति के दुर्जन लोग इस पृथ्वी पर वजन बढ़ाने वाले राक्षस ही हैं ।

• दानी होकर भी यश की ईच्छा ना होना, प्रिय वचन बोलते हुऐ दान देना, विद्वान होकर विद्या का अभीमान ना करना, वीर होकर क्षमाशील होना, सुन्दर स्त्री के चचंल नयनों के कटाक्ष से प्रभावित ना होना, कटु वचन सुनकर भी उत्तेजित ना होना, अवसर मिलने पर भी चरित्र भ्रष्ट ना होना, पराये धन का लालच ना करना और युवा स्त्री का निरन्तर घर से बाहर बने रहना तथा पराये पुरूषों के अधिन कार्य करके भी चरित्र भ्रष्ट ना होना - ये सब असम्भंव नही पर कठीन अवश्य हैं ।

• आलस्य से विद्या की हानि होती हैं, पराये हाथ में जाने से धन की हानि होती हैं, धन की कमी से व्यापार की हानि होती हैं, झूठ बोलने से प्रतिष्ठा की हानि होती हैं, नेता के बिना दल की हानि होती हैं, एकता और अखण्डता के बिना राष्ट्र की हानि होती हैं ,और ज्ञान के बिना सर्वत्र हानि होती हैं । वृध्दावस्था से बल और सौन्दर्य का नाश होता हैं, लालसा से धर्य का नाश होता हैं, मृत्यु से शरीर का नाश होता हैं, द्वेष भाव से प्रीती का और कामावेग से लज्जा का नाश होता हैं, कुसंगति से चरित्र का नाश होता हैं, क्रोध से विवेक का नाश होता हैं और अभिमान से तो सर्वनाश ही हो जाता हैं ।

• नदी के किनारे उगने वाले वृक्ष, खेत में फसल के साथ उगने वाले पौधे, दुर्जनो की संगति में रहने वाले पुरूष, दूसरे के घर ज्यादा जाने और ठहरने वाली स्त्री, अनुशासन और आज्ञा न मानने वाली संतान, फिजूलखर्च करने और ऐयाश तबियत वाला व्यापारी, रिश्वतखोर अधिकारी और अच्छी गुप्तचर व्यवस्था विहिन राज्य शासन - ये सब नष्ट होते ही हैं चाहे कितने ही विलंब से हो ।

• आलसी का यश नष्ट हो जाता हैं, दुष्टों की मैत्री नष्ट हो जाती हैं, नष्टेन्द्रिय का कुल नही चलता, व्यसनी की विद्या नष्ट हो जाती हैं, विलासी की सम्पदा नष्ट हो जाती हैं, कंजूस का सुख नष्ट हो जाता हैं, गरजमंद की बुध्दी नष्ट हो जाती हैं, झूठ बोलने वाले की स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती हैं और विवेक नष्ट हो जाने पर सब नष्ट हो जाता हैं । विपति में जिसका विवेक नष्ट नही होता हैं वह निश्चय ही नष्ट होने से बच जाता हैं ।

• परदेश में विद्या मित्र हैं, विपति में धैर्य हैं, घर में पत्नी मित्र हैं, रोगी के लिये वैद्य मित्र हैं, आचरण करने पर ज्ञान मित्र हैं, शत्रु के सामने शस्त्र मित्र हैं, शस्त्र का मित्र साहस हैं, मरते हुऐ प्राणी का मित्र धर्म हैं, जरूरत पड़ने पर और मुसीबत में काम आये वह भी मित्र हैं परन्तु जो व्यक्ति स्वार्थी, नीच मनोवृति वाला, कटुभाषी और धूर्त होता हैं उसका कोई मित्र नही होता, न वह खुद किसी का मित्र होता हैं ।

• धार्मिक वचन सुनते समय यो भजन कीर्तन करते समय, शमशान में अपने किसी स्वजन की चिता को जलते हुऐ देखने पर, बहुत बुरी तरह से रोग ग्रस्त किसी रोगी से मिलते समय और क्रोध शांत होने पर पश्चाताप करते हुऐ जो भावना ह्रदय में उत्पन्न होती हैं वह स्थायि नही होती हैं । यदि स्थायि हो सकी होती तो ऐसे आदमी का जीवन और ही ढंग का हो जाता । उसका आचार - विचार ऐसा नही रह पाता जैसा कि दुनियां के प्रंपचों उलझे हुऐ और नाना प्रकार की तिकड़में लगाने वाले व्यक्ति का होता हैं । थोड़ी देर का ऐसा मरघटिया वैराग्य लुप्त हो जाता हैं और हम फिर पुराने ढर्रे में उलझ जाते हैं ।

• धैर्य और संतोष हो तो निर्धनता भी बुरी नही लगती, कपड़े साधारण हो पर साफ और धुले हुऐ हो तो बुरे नही लगते, भोजन स्वादिष्ट ना हो पर ताजा हो और गरम हो तो बुरा नही लगता, मनुष्य अच्छे स्वभाव का, सेवाभावी और मधुर भाषी हो तो कुरूप होने पर भी बुरा नही लगता , घर छोटा और साधारण हो पर साफ सुथरा और व्यवस्थित हो तो बुरा नही लगता और तन स्वस्थ तथा मन प्रसन्न हो तो कुछ भी बुरा नही लगता ।

• कंजूस को दान देना बुरा लगता हैं, लोभी को मांगने वाला बुरा लगता हैं, चोरों को प्रकाश बुरा लगता हैं, मूर्ख को समझाने वाला उपदेशक बुरा लगता हैं, कर्जदार को तगादा बुरा लगता हैं, रूपवान को बुढ़ापा बुरा लगता हैं, व्याभिचारिणी स्त्री को पती में रूचि नही नही रहती, निर्धन को धनवान अच्छे नही लगते और जिसका मन शोक से व्याकुल हो उसे कुछ भी अच्छा नही लगता ।

• जो कल्याण कारी हो वही आचरण धर्म हैं, जो सदा ऐक सा रहे वही सत्य हैं, जो लेने की ईच्छा न रख कर देता हैं वही दाता हैं, जो स्नेह से बंधा हो वही बन्धु हैं, जो विपति में साथ दे वही मित्र हैं, जो न्याय मार्ग पर चलता हुआ पुरूषार्थ करता हो वही सत्पुरूष हैं, जो पिता को यश और संतोष प्रदान करें वही पुत्र हैं, जो गुरू के उपदेश पर आचरण करे और उन्नति करे वही शिष्य हैं, जो वैर भाव नही करता वही क्षमाशील हैं, जिसके मन में खलता, द्वेष, और ईर्ष्या का भाव ना हो वही अंहिसंक हैं और जो संतोष करना जानता हो वही सुखी हैं ।

• भावना से कर्तव्य श्रेष्ठ हैं, मानने से जानना श्रेष्ठ हैं, पढ़ने से गुनना श्रेष्ठ हैं, ज्ञान से अनुभव श्रेष्ठ हैं, कहने से कर दिखाना श्रेष्ठ हैं, दान से दक्षिणा श्रेष्ठ हैं, बुरा बोलने से न बोलना श्रेष्ठ हैं, दमन से निग्रह श्रेष्ठ हैं, त्याग से अनासक्ति श्रेष्ठ हैं, सत्य से अहिंसा श्रेष्ठ हैं और सबकी आत्मा को अपनी आत्मा के समान समझना सर्वश्रेष्ठ है। ।

• सदगुण न हो तो रूप व्यर्थ हैं, विनम्रता न होतो विद्या व्यर्थ हैं, उपयोग या काम में प्रयुक्त ना होतो धन व्यर्थ हैं, साहस न होतो हथियार व्यर्थ हैं, भूख न होतो भोजन व्यर्थ हैं, प्रेम न होतो भाई का होना व्यर्थ हैं, होश न होतो जोश व्यर्थ हैं, जोश न होतो जवानी व्यर्थ हैं और परोपकार न होतो जीवन ही व्यर्थ हैं ।

• इस जीवनकाल में और मृत्यु के बाद धर्म ही हमारा साथ देता हैं । अंत समय में हमे सब छोड़ना पड़ता हैं और सब हमें छोड़ देते हैं उस वक्त भी धर्म हमारा साथ देता हैं। निति में कहा हैं - जीवन का मित्र आहार हैं, रूप का मित्र यौवन हैं, यौवन का मित्र पुरूषार्थ हैं, पुरूषार्थ का मित्र परोपकार हैं, रोगी का मित्र वैद्य हैं और मरने वाले का मित्र धर्म हैं ।

• खाया हुआ अन्न न पचने पर विष हो जाता हैं, अभ्यास न करने पर विद्या विष हो जाती हैं, वृध्द पुरूष के लिये नवयुवा स्त्री का सहवास विष का काम करता हैं, घी और शहद समान मात्रा में मिलने पर विष हो जाते हैं , कटु वचन से वाणी विष हो जाती हैं, तरूणी विधवा स्त्री के लिये कामवासना विष हो जाती हैं, विघर्थी के लिये आलस्य विष हो जाता हैं, कर्कशा पत्नी का साथ पती के लिये और परैरूषहीन पती का साथ पत्नी के लिये विष के समान होता हैं तथा अति करना सब जगह विष का काम करता हैं ।

• मनुष्य को दिन में ऐसा काम नही करना चाहिये कि जिससे रात को चैन से सो न सके और न रात में ऐसा कोई काम करना चाहिये कि दिन में किसी को मुंह न दिखा सके । वर्ष के ऑठ मास ऐसा उद्योग करें कि वर्षा के चार मास सुखपूर्वक निर्वाह कर सके, युवाकाल में ऐसा आहार - विहार और आचार - विचार रखें कि वृध्दावस्था सुखपूर्वक कट सके और पुरे जीवन भर ऐसे कर्म करता रहे कि सुखपूर्वक मर सके और अगला जन्म सुखपुर्ण हो सके ।

• क्षमा, सुहानूभूति सेवा और शातीप्रियता - ये तीन गुण ऐसे हैं जिनसे आप सबको वश में कर सकते हैं । जिनके मन शांत हैं, क्रोध व ईर्ष्या - द्वेष से रहित हैं, जो दूरदर्शी नजर रखते हैं और जो गुजरे हुऐ का शोक नही करते, अपनी आय से कम खर्च करते हैं, जरूरी खर्च में कंजूसी नही करते और फालतू ऐक पैसा भी खर्च नही करते, समय की कीमत समझते हैं, जो काम करने और बालने से पहले सोच लेते हैं, अपनी पुरी क्षमता से कर्तव्य पालन करते हैं और परिणाम की चिंता नही करते स्वंय तो सुखी रहते ही हैं और को भी सुख देने वाले होते हैं ।

• जो कष्ट परमार्थ या तप के लिये न उठाया गया हो वह कष्ट व्यर्थ हैं, जो दान सत्पात्र और जरूरतमंद को न दिया गया हो वह दान व्यर्थ हैं, जो भोजन न तो स्वादिष्ट हो न पोषक हो वह भोजन व्यर्थ हैं, जो पुरूष

परिवार और समाज के हित में कार्य न कर सके उसका पुरूषार्थ व्यर्थ हैं और जो स्त्री संतान को अच्छा स्वभाव, अच्छा चरित्र, अच्छा स्वास्थ और शील युक्त संस्कार न दे सके उसका स्त्री होना व्यर्थ हैं ।

• जलती हुई अंगीठी को लाघंना यां पैरों की तरफ रखकर सोना, पैरो ाके तपाना, सिर को सेकना, अग्नि में अपवित्र वस्तु डालना, सन्ध्यां के समय सोना, खाना, पढ़नास्त्री सहवास और यात्रा आरंभ करना, अस्त होते हुऐ सूर्य को देखना, मलमूत्र को विसर्जित करते हुऐ बाते करना, रजस्वाला स्त्री के साथ सोना अथवा सहवास करना, अपने होठ यां नाखून चबाना, गहरी नींद सोये हुऐ को जगाना, बड़ो से मुँह जोरी करना, छोटों पर अत्याचार करना, दुष्टों की सगंति और सज्जनों की उपेक्षा करना - इतने काम बुध्दीमान नही करते ।

• शोक शास्त्र ज्ञान और बुध्दी को नष्ट कर देता हैं, शोक से धैर्य नष्ट होता हैं, शोक से समस्त खुशियां नष्ट होती हैं अंत शोक के समान कोई शत्रु नही हैं । बीती हुई बातों का शोक नही करना चाहिये, भविष्य की चिंता नही करना चाहिये और बुध्दीमानी की बात ये हैं कि वर्तमान काल के अनुसार अपने कर्तव्यों का पालन करने में जुटें रहना चाहिये । सब समस्याओं को सुलझाने का उपाय ऐक ही हैं - प्रयत्न करना और प्रयत्न करना ।

• शासक, मन्त्री, अधिकारी, दांत, बाल और नाखून - ये अपने स्थान से हट जाने पर उपयोगी और शोभित नही रहते । सूर्य, आयु, स्तन और रूप - ये ढल जाने पर शोभा खो देते हैं । कुलीन पुरूष, पेड़ का पत्ता, विद्वान और नारी - अपनी मर्यादा से गिर कर शोभायमान नही रहते । इसी प्रकार हर वस्तु की शोभा उसके अपने स्थान पर ही होती हैं । पेड़ से टुटा पत्ता, सिर से टुटा बाल, मुह से निकला वचन और बन्दूक से निकली गोली अपने स्थान पर फिर वापस नही लौटते ।

• पत्नी, संतान, बीमारी, धन सम्पदा, विद्या अभ्यास, व्यवसाय, सज्जनो की सेवा और कर्तव्य पालन - इनके प्रति कभी लापरवाह न रहें । माता - पिता, गुरु, मालिक, भाई, पुत्र और मित्र - इनकी कभी उपेक्षा न करें । परिवार के सदस्यों , महिलाओं, भाईयों, पड़ौसियों, बच्चों, वृध्दों, पराई स्त्रीयों, रोगियों और जो अपने आश्रित हो उनसे कटु वचन न कहें और किसी अजनबी का कभी विश्वास न करें ।

• अपनी दौलत, अपनी कमजोरी, अपने घर के दोष, मन की योजना, मित्र के दोष, दिया हुआ दान, किया हुआ उपकार, और अपने अपमान की बात - के विषय में किसी से चर्चा न कर गुप्त ही रखें । किसी पुरूष से उसका वेतन ना पुछें, महिंला से आयु न पुछें, पर स्त्री यां पर पुरूष से आखें मिलाकर बात न करें और न ही एंकान्त में रहें, जब तक कार्य सफल नहो जायें तब तक उसके विषय में किसी को कुछ न बतायें ।

• कर्ज लेते समय तो राहत मालूम देती हैं पर लौटाते समय कष्ट होता हैं, दुष्ट के साथ मित्रता करते समय शूरू में तो अच्छा लगता हैं पर बाद में कष्ट होता हैं । मन में उठी गलत और हानिकारक कामना को पूरा करते समय मजा आता हैं पर जब इसका परिणाम सामने आता हैं तब कष्ट होता हैं । बिना आगा पीछा और भला बुरा सोचे कोई काम करना आसान होता हैं पर इसका फल भोगने में कष्ट होता हैं ।

• दान करके गुप्त रखना, घर आये शत्रु का भी सत्कार करना, परोपकार करके कहना नही और दूसरे के उपकार को प्रकट करते रहना, धन वैभव होने पर भी अभिमान न करना, किसी के पीठ पीछें उसकर निदां न करना, अपना दोष बताये जाने पर उत्तेजित न होना और अपने प्रति उपकार करने वाले के प्रति हमेशा कृतज्ञ रहना - ये ऐसे सदगुण हैं जो किसी भी पुरूष को महापुरूष बना देते हैं ।

• दान देकर जो इसका डंका पीटते हैं, परोपकार का बदला चाहते हैं, पीठ पीछे नींदा करते हैं, घर आये का अपमान करते हैं बारबार किसी के यंहा जाते हैं, दूसरों की उन्नति देख प्रसनन नही होते, देर सवेर ऐसे लोग अपनी प्रतिष्ठा से गिर जाते हैं । जो ऋण ग्रस्त नही हैं वही प्रसन्न हैं, जो सन्तोषी हैं वही सुखी हैं, शोक का कारण मोह हैं और जिस मार्ग पर महापुरूष चले हों वही सन्मार्ग हैं ।

• कहावत हैं कि रोग घर खांसी और लड़ाई का घर हांसी यानि हंसी-मजाक । हंसना तो अच्छा हैं पर हंसी उड़ाना अच्छा नही । हंसी-मजाक तभी अच्छा और सार्थक होता हैं जब वो किसी का दिल खुश करता हो । किसी से ऐसी हंसी दिल्लगी नही करना चाहिये जो उसका दिल दुखा दें यां झगड़ा करा दे । द्रोपदी ने दुर्योधन के साथ 'अन्धो के अन्धे ही पैदा होते हैं' कहकर चुहलबाजी की थी जिसका बदला उसने द्रोपदी का चीरहरण करवा कर लिया था । हंसी-हंसी में कही गई गलत बात कभी-कभी दिल में ऐसी चुभ जाती हैं कि हंसी दिल्लगी का मतलब ही बदल जाता हैं और अर्थ का अनर्थ हो जाता हैं । अंतः हंसी मजाक सोच समझकर ही करना चाहिये ।

• जो अपने काम को भूलकर दूसरों की सेवा किया करते हैं वे संत और महापुरूष हैं, जो अपने और पराये दोनो के काम सम्पन्न करते रहते हैं वे पराक्रमी और सज्जन पुरूष हैं, जो अपना काम बनाने के लिये दूसरो का काम बिगाड़ देते हैं वे स्वार्थी और दुष्ट पुरूष हैं और जो व्यर्थ ही दूसरो के काम बिगाड़ा करते हैं, कष्ट देते रहते हैं और दूसरों को दुख देकर खुश होते हैं वे कौनसे पुरूष हैं ये आप ही तय कर लें ।

• जैसे दुध में मौजूद होते हुऐ भी घी दिखाई नही देता, फूल में गन्ध होती हैं पर दिखाई नही देती, हमें अपनी बुराई और दूसरो की भलाई दिखाई नही देती, बीज में छुपा वृक्ष दिखाई नही देता, शरीर में होने वाली पीड़ा दिखाई नही देती वैसे ही सर्वत्र व्याप्त और विद्यमान रहने वाला परमात्मा भी दिखाई नही देता ।

• रोगी होने पर, दुखी होने पर, अकाल पड़ने पर, शत्रु की ओर से संकट उपस्थित होने पर, आपातकाल के समय, राज्य सभा यां न्यायलय में जरूरत पड़ने पर सहायक रूप में और मरने पर शमशान तक जो साथ देता हैं तथा जो स्नेह के बन्धन से बंधा रहता हैं, वही बन्धु हैं ।

• नदी पार करके मनुष्य नाव छोड़ देता हैं, यात्रा पुरी करने पर यात्री सवारी छोड़ देता हैं, विद्या पुरी होने पर शिष्य गुरु को छोड़ देता हैं, भोजन करके अभ्यागत घर छोड़ देता हैं, मतलब निकल जाने पर स्वार्थी उपकारी को छोड़ देता हैं, रोग से मुक्त होकर रोगी चिकित्सक को छोड़ देता हैं और मृत्यु आने पर जीव ये शरीर ही छोड़ देता हैं ।

• लक्ष्मी की सिर्फ पुजा करने से ही लक्ष्मी प्रसन्न नही होती बल्कि सिंह के समान उद्यम करने से ही लक्ष्मी प्रसन्न होती हैं । कंजूसी करके कोई धन सम्पन्न और सुखी नही हो सकता बल्कि धन का उपयोग करने से ही सम्पन्न और सुखी होता हैं । जंहा मुर्खो का आदर नही होता, जंहा विद्वानो का अपमान नही होता, जंहा से याचक कुछ पाये बिना खाली हाथ नही लौटता, जंहा परिवार में कलह नही होती और सब परस्पर प्रीतीपूर्वक रहते हैं और जंहा पति-पत्नी दो तन ऐक प्राण होकर रहते हैं वंहा लक्ष्मी का वास रहता हैं ।

• जो सफलता और सम्पदा पाकर इतराते नही हैं, संकट और विपती में घबराते नही हैं, जो किसी की मजबूरी का फायदा नही उठाते, जो दूसरे के दुख का अपने दुख जैसा समझते हैं जो परोपकार के लिये सदैव तत्पर रहते हैं और सेवा करके भी धन्यवाद देते हैं, जो धैर्य और विवेक कभी नही छोड़ते ऐसे जीवात्माओं का मनुष्य योनि में जन्म लेना सफल हो जाता हैं ।

• अच्छे शानदार वस्त्र पहनने वाला सभा को मोहित कर लेता हैं, अच्छी तेज सवारी वाला रास्ते की दूरी को कुछ नही समझता, अच्छे स्वभाव और मधुर भाषी सबको वश में कर लेता हैं । कभी किसी को निर्बल न समझो, विरोधी से भी प्रेम और मधुरता से व्यवहार करो, बलवान से बैर मत करो और अवसर देखकर काम निकाल लो अर्थात मौका मत चूको बस, इसी को चतुराई कहते हैं ।

• जिस व्यवसाय में आय कम और खर्च ज्यादा हो या जिसमें आय बढ़ाने के लिये बेइमानी करनी पड़े उस व्यवसाय को छोड़ देना ही उचित हैं क्योंकि बेईमानी से प्राप्त की गई आय का पैसा दुख और विपति लाने वाला सिध्द होता हैं जिसका पता बाद में चलता हैं तत्काल नही चलता इसलिये हमें ख्याल मे नही आता । धन हम अपने जीवन निर्वाह के लिये, अपनी आवश्यकताओं की पुर्ती के लिये और पारिवारिक विकास के लिये कमाते हैं ताकि परिवार अभावों से पीड़ीत और दुखी ना रहें । यदि धन प्राप्त करके भी दुख दूर ना हो ऐसे धन से क्या लाभ ?

• जैसे कूड़े के ढेर पर लोग और कूड़ा कचरा फेकते हैं उसी तरह गन्दगी के साथ और गन्दगी जुड़ती रहती हैं । शरीर में गन्दगी (दोष) पैदा हो जाये तो इसी तरह बढ़ती जाती हैं । इससे पहले कि शरीर में उत्पन्न दोष शरीर को हानि पहुचायें प्रकृति उसे पुरी तरह बाहर निकालने का प्रयत्न करती हैं । दस्त, उल्टी, ज्वर और जुकाम इसलिये होते हैं ।

• यदि आप सभी कार्य प्रभु को अर्पण करके करें, अपने सारे कामकाज उसकी ईच्छा समझकर निति और धर्म का पालन करते हुऐ करें, क्या होगा यह प्रभु जाने, जो होगा भले के लिये होगा और जैसा भी होगा मुझे मंजुर होगा इस भावना से अपना कर्तव्य करते रहें तो फिर आप जैसा सुखी कौन ?

• बीमार होना हमारा स्वभाव नही हैं निरोग रहना हमारा स्वभाव हैं इसलिये बीमार होने पर हमे बेचैनी होती हैं । ऐसा कौन मूर्ख होगा जो बीमार होना चाहेगा लेकिन फिर भी बीमार होते ही हैं । आगन्तुक- रोग या पीड़ा होने की बात जुदा हैं पर निज रोग - याने आहार-विहार और आचरण के कारण बीमार होना कमारी मूर्खता ही होगी । • जीवन संघर्ष का नाम हैं और संघर्ष ही जीवन हैं अतः इससे घबराना या मुंह मोड़ना उचित नही । दुनिया में जब आये है । तो जीना ही पड़ेगा लेकिन सही जीवन वही जी सकता हैं जिसके पास स्वस्थ, निरोग और शक्ति शाली शरीर होगा । स्वस्थ रहना हमारा जन्म-सिध्द स्वरूप हैं । इसे बिगड़ने न दे ।

• कर्ज, शत्रु और रोग - इनको कभी साधारण और छोटा न समझो, इनकी तरफ से लापरवाह न रहो, और इनसे जल्द से जल्द छुटकारा पाने का पुरा प्रयत्न करो । इनको जड़ से समाप्त करना जरूरी होता हैं क्योकि यदि ये जरा से बच जाऐं तो फिर बढ़ने लगते हैं और ये जितने बढ़ते हैं उतने ही हमसे ज्यादा शक्ति शाली हो जाते हैं ।

• बहुत परिश्रम और कम खुराक, बहुत काम करना और कम विश्राम, बहुत चिन्ता करना और कम निन्द्रा, बहुत आहार करना और कमजोर पाचन शक्ति, बहुत खर्च करना और कम आय, बहुत भोग विलास करना और कमजोर शरीर - ये सब दुखद संयोग हैं अर्थात ऐसी स्थिति दुख देने वाली ही होती हैं ।

• संसार का कोई भी पदार्थ बुरा और व्यर्थ नही होता बल्कि उस पदार्थ का उपयोग ही उसे अच्छा या बुरा बनाता हैं । युक्ति और मात्रा पुर्वक उचित हेतु के लिये जहर का उपयोग करने पर जहर भी औषधि का काम करता हैं और यदि भोजन ही युक्ति, मात्रा और हेतु के विरूध्द किया जाये तो विष हो जाता हैं ।

• असफलता से निराश नही होना चाहिये बल्कि इसे ऐक चुनौती की तरह स्वीकार करके दुगुने उत्साह से फिर प्रयत्न करना चाहिये । सफलता और असफलता ऐक ही सिक्के के दो पहलू हैं । जो उठता हैं वही तो गिरता हैं 'गिरते हैं शह सवार ही मैदाने जंग में' जीवन में उतार-चढ़ाव तो आते ही हैं, इनसे परेशान नही होना चाहिये ।

• विपतियों, बाधाओं और असफलताओं से घबराना और निराश होना उचित नही क्योंकि इनसे हमारी क्षमता और योग्यता की परिक्षा होती हैं । जैसे कसौटी पर कसने, घिसने, काटने और आग में तपाकर हथौड़ी से कूटने पर सोने की परिक्षा होती हैं वैसे-संघर्ष, पराक्रम, धैर्य, साहस और शील-चरित्र से हमारी परिक्षा होती हैं ।

• हमारी भलाई चाहने वाला पराया भी हो, तो भी अपना हो जाता हैं जबकि हानि करने वाला अपना भी अपना नही होता बल्कि शत्रु होता हैं । देखिये न ! रोग और विकार आखिर तो अपने शरीर में ही पैदा होते हैं, इसी में रहते भी हैं और पनपते भी हैं फिर भी शरीर को कष्ट देते हैं और नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं जबकि दूर जंगल में पैदा हुई जड़ी बूटी शरीर के कष्ट मिटाती हैं और प्राण रक्षा करती हैं ।

• कामवासना जैसी व्याधि कोई नही, क्रोध जैसी कोई अग्नि नही, लोभ जैसा कोई जाल नही, अज्ञान से बढ़कर कोई अन्धकार नही, मूर्खता से बढ़कर कोई निर्बलता नही, तृष्णा से बढ़कर कोई दरिद्रता नही, सन्तोष से बढ़कर कोई सुख नही, विद्या से बढ़कर कोई धन नही, मोह से बढ़कर कोई संबंध नही और ईश्वर से बढ़कर कोई भी नही ।

• कोई कितना भी ज्ञानी और विद्यावान हो, यदि वह अपने आचरण में विद्या और ज्ञान का उपयोग नही करता तो वह मूर्ख ही नही मतिमूढ़ हैं । वह उस जानवर की तरह हैं जिसपर बहुत सी किताबें लदी होती हैं पर वह उन पुस्तकों के ज्ञान से लाभ नही उठा पाता, जैसे तपेली और कलछी को स्वादिष्ट व्यजंन के स्वाद का आनंद नही मिलता ।

• विद्या और रूपया-पैसा दोनो ही धन हैं फर्क ये हैं कि खर्च करने से बढ़ती हैं और धन खर्च करने से घटता हैं न खर्च किया जाये तो उपयोगी नही होता । विद्याधन को कोई चुरा नही सकताजबकि रूपया पैसा चोर चुरा लेते हैं विद्या से धन मिल सकता हैं परन्तु धन से सिर्फ पुस्तकें मिलती हैं विद्या नही मिलती ।

• लाभ क्या हैं ? अच्छी संगति । दुख क्या हैं ? बुरी संगति । हानि क्या हैं ? समय पर चूक जाना । चतुरता क्या हैं ? कर्तव्य पालन में कुशल होना । वीरता क्या हैं ? मन और इन्द्रियो को वश में रखना । श्रेष्ठ धन क्या हैं ? सदविद्या का होना । सुख क्या हैं ? सन्तोष धारण करना । भाग्य क्या हैं ? अपने कर्मो का परिणाम ।

• जो धर्म को त्यागता हैं, धर्म उसे त्याग देता हैं । जो समय नष्ट करता हैं, समय उसे नष्ट कर देता हैं । जो धर्म का पालन करता हैं, धर्म उसका पालन करता है। । जो ईश्वर के आश्रित होकर अपने कर्तव्य का पालन करता हैं, ईश्वर उसका पालन करता हैं । जो अपनी आत्मा जैसी दूसरों की आत्मा को समझता हैं वह किसी से बैर नही करता ।

• आचरण और व्यवहार से मनुष्य के कुल का पता चलता हैं, बोली से मनुष्य के देश का पता चलता हैं, आदर भाव से मनुष्य की प्रीती का पता चलता हैं, आखों से मनुष्य के मन के भावों का पता चलता हैं, संकट के समय मनुष्य के धैर्य का पता चलता हैं, संगति से मनुष्य की प्रकृति का पता चलता हैं और कोई भी काम कैसा हैं ईसका पता उसके परिणाम से चलता हैं ।

• दुष्ट व्यक्ति का साथ किसी भी सुरत में अच्छा नही होता हैं । दुष्ट व्यक्ति और सांप - इन दोनो में सांप फिर भी अच्छा हैं क्योंकि सांप तो कालवश ऐक ही बार काटता हैं पर दुष्ट तो पग पग पर हानि पहुचाता हैं । कोयला जलता हुआ हो तो हाथ जला देता हैं ठंडा होतो हाथ काले कर देता हैं ।

• जिसे विद्याध्यन, साहित्य, संगीत, कला, सासांरिक वैभव, सुखों के भोग, धन सम्पदा, सुन्दर वस्तुऐं, सुन्दर स्त्री और सुख दुख का अनुभव - इन सब में रूचि न हो तो वह यां तो कोई सिध्द महापुरूष हैं यां फिर मानव रूप में मूढ़ पशु हैं । सामान्य मनुष्य इनसे आकर्षित होता हैं पर जो इनसे सामान्य रूचि लेता हैं वह बुध्दीमान हैं ।

• जो प्राप्त वस्तु से सन्तुष्ट रहता हैं और अप्राप्त के लिये दुखी नही होता, जिस हाल में हो उसी में प्रसन्न रहता हैं और सब कुछ ईश्वर के ईच्छा मानकर राजी रहता हैं वह व्यक्ति दुख से बचा रहता हैं और जो व्यक्ति दुख से बचना जानता हैं वह बुध्दीमान हैं क्योंकि बुध्दीमान दुखी नही होता ।

• जो बात के मर्म को तुरन्त समझ लेता हैं, सुनने योग्य बातों को एकाग्रचित हो सुनता हैं और व्यर्थ की बातों में रूचि नही रखता, खूब सोच विचार करके ही कोई काम शुरू करता हैं और हाथ में लिये काम को अधूरा नही छोड़ता और जो बिना पुछे किसी को सलाह नही देता, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो नष्ट हुई वस्तु के लिये शोक नही करता, जो विपति पड़ने पर धैर्य और विवेक का साथ नही छोड़ता, जो पराई वस्तु का लालच नही करता और सदा शुभ कर्म करके अपने पुरूषार्थ से ही कोई वस्तु प्राप्त करता हैं और जो सफल होकर इतराता नही, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो यश और आदर मिलने पर अभिमानी नही होता, आदर न मिलने पर अप्रसन्न नही होता, जो अपनी विद्या का अंहकार नही करता और अपने धन का दुरूपयोग नही करता, जो गहन गम्भीर और उदार स्वभाव रखता हैं और किसी के भी प्रति बैर भाव नही रखता, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो अपने द्वारा किये गये उपकार और दूसरों के द्वारा अपने प्रति किये गये अपकार को याद नही रखता, जो अपनी बुराईयों और दूसरों की भालाईयों को भूलता नही, जिसके साथ रहने से किसी का अहित नही होता बल्कि भला ही होता हैं और जो किसी भी समस्या को ठीक ढंग से सुलझा लेता हैं, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो विद्याहीन होकर भी घमण्डी हो, दरिद्र, बुध्दीहीन होकर भी महात्वाकाक्षी हो, जो काम को पुरा न कर सके, दूसरों के काम में टांग अड़ाता हो, अपने हाथ की आधी छोड़कर, पुरी के लिये दौड़ता हो, जो बिना पुछें राय देता हो, बिना बुलाये किसी के यंहा जाता हो, अंजान व्यक्ति का विश्वास कर लेता हो, वही मूर्ख हैं ।

• जो मर्यादा पालन करता हैं, जो निति के विपरित आचरण नही करता, जो किसी भी विषय पर तर्क और युक्ति कर सकता हैं, जो अदभूत बातें जानता हैं, जो शक्ति के अनुसार कार्य करता हैं, जो इशारे में ही बात को समझ लेता हैं, जो विनम्र और अंहकार रहित हैं और जानता हुआ भी समझता हैं कि कम जानता हैं, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो सही बात कहने में सकोंच नही करता और सच को भी मधुर ढंग से कहता हैं, जो कटु सत्य नही बोलता और प्रिय असत्य भी नही बोलता, जो अपनी प्रशंसा और दूसरों की निंदा नही करता, जो अपने हित के लिये किसी का अहित नही करता और जो किसी भी लालच, भय यां बाधा से न्याय मार्ग से विचलित नही होता, वही बुध्दीमान हैं ।

• जो व्यक्ति गुण और विद्यारहित होकर भी घमण्डी हो, दरिद्र होकर भी बड़ी बड़ी ईच्छायें रखता हो, अन्याय मार्ग और खोटे काम करके भी धन कमाना चाहता हो, जो थोड़ा धन पाते ही इतराने लगे, अपनी क्षमता से बड़े काम हाथ में ले लेता हो पर पुरा न कर पाता हो, जो अपने पास की वस्तु से सन्तुष्ट नही होता हो और दूसरे की वस्तु को अधिक अच्छी समझकर उसकी लालसा रखता हैं, वह व्यक्ति मूर्ख हैं ।

• जो अपनी प्रशंसा खुद ही करता हो और दूसरों की प्रशंसा सुनकर खुश नही होता, जो दूसरों की निन्दा करता हो और अपनी आलोचना सहन नही करता, जो दूसरों की उन्नति से ईर्ष्या रखता हो और अपने समान किसी को नही समझता, जो बिना मागे राय देता हो लेकिन किसी से राय लेने में अपनी हेठी समझता होऔर उचित सलाह देने पर भी जो मानता न हो, वह व्यक्ति मूर्ख हैं ।

• जो दोस्त और दुश्मन की, अच्छे बुरे की, हितकर और अहितकर तथा उंच नीच की पहचान न कर सके, हमेशा भयभीत और आशंकित रहे, जरा सी मुर्सीबत से घबरा उठे, दूसरों की देखा-देखी अपने स्तर से उंचा रहन सहन रखना चाहें, अपनी सामर्थ्य से बाहर कार्य करे, उंचे उंचे सपने देखे और हमेशा मन के लडडू और ख्याली पुलाव खाता रहे ऐसा व्यक्ति मूर्ख हैं ।

• जो अपने समय का सही उपयोग नही करता और वक्त निकल जाने पर पछताया करता हैं, अपने से बड़ो की बात नही मानता और माता पिता की अवज्ञा करता हैं, जो सभ्य व्यवहार करना नही जानता और न अपने हित और अहित को समझता हैं, जो विचार पूर्वक कार्य नही करता बल्कि कार्य करने के बाद कार्य के भले बुरे परिणाम प्राप्त होने पर सोच विचार करता हैं ऐसा पिछली मति वाला व्यक्ति मूर्ख हैं ।

• भोजन करके सोना, चिन्ता करते हुऐ भोजन करना, भोजन करते ही शौच जाना यां शौच से आते ही भोजन करना, भोजन के अंत में जल पीना, भूख लगने पर भोजन न करना, भूख मर जाये तब भोजन करना, ठीक से चबाये बिना ही निगल जाना, भोजन करके स्नान करना, तीन घन्टे के अन्दर दोबारा भोजन करना और आंठ घन्टे से ज्यादा भूखे रहना, मात्रा से अधिक भोजन करना - ये सब काम अपने स्वास्थ से दुश्मनी करने के बराबर हैं ।

• मूर्खतावश न पहचाना गया रोग शुरू में तो अणु के समान ही रहता हैं किन्तु धीरे धीरे बढ़ता जाता हैं । रोग बढ़कर बलवान हो जाता हैं और उस मूर्ख व्यक्ति के बल और शरीर को नष्ट करने लगता हैं । मूर्ख व्यक्ति तब तक रोग दूर करने के उपाय नही करता जब तक वह बहुत पीड़ीत और विवश नही हो जाता लेकिन तब तक वह काफी कमजोर हो चुका होता हैं इसलिये बलवान हो चुके रोग से मुक्ति पाने मे उसे कठिनाई भी होती है और देर भी लगती है ।

• जिसे तरह कटा हुआ वृक्ष फिर से हरा हो जाता हैं उसी प्रकार रोग को समूल नष्ट न किया जाये तो वह फिर बढ़ जाता हैं । जैसे अनुकूल ऋतु व जल उपलब्ध होने पर जड़ से पुनः शाख व पते फूट आते हैं उसी प्रकार यदि रोग को दबा दिया जाये और रोग को कारण सहित समूल नष्ट न किया जाये तो अपने अनुकूल दूषित आहार-विहार और अपथ्य का सयोंग होने पर ऐसा रोग फिर से पनप कर शरीर को ग्रस्त कर लेता हैं ।

• हम सवर्था कर्म का त्याग नही कर सकते क्योकिं हम किसी भी समय क्षणमात्र भी कुछ न कुछ किये बिगैर नही रह सकते । इसमें शक नही कि प्राकृतिक गुणो से विवश होकर कुछ न कुछ कर्म किया ही करते

हैं इसलिये जो पुरूष हठपूर्वक इन्द्रियों को कार्य करने से रोकता हैं पर मन में भोगो तथा कामनाओं का चिन्तन किया करता हैं वह मिथ्याचारी, पाखण्डी और दम्भी हैं तथा कुछ न कुछ करता हुआ भी कर्मो के बन्धन से बन्धता हैं ।

• इन्द्रियों का निग्रह करते हुऐ मन को विवेक तथा धैर्य से वश में रख कर ही उचित कर्म किये जा सकते हैं जैसे घोड़े की लगाम वश में रखकर और सही मार्ग का ज्ञान होने पर ही हम सही रास्ते पर चल सकते हैं । फल के प्रति आसक्ति न रख कर अपने कर्म को अपना धर्म समझकर जो व्यक्ति अपने कर्तवयो का पालन करता हुआ भी कर्मो के बन्धन में नही बन्धता ऐसा व्यक्ति दुख से बचा रहता हैं ।

• अति करना अच्छा नही होता और न किसी भी तरह की अति होना अच्छा हैं । अति सुन्दरता के कारण सीता का हरण हुआ, अति घमण्ड के कारण रावण का नाश हुआ, अति दान से राजा बली को बधंना पड़ा अतः 'अति सर्वत्र वर्जयेत्' के अनुसार अति करना या अति होना कहि भी उचित नही होता । न ज्यादा चुप रहना अच्छा होता हैं और न ज्यादा बरसना ही अच्छा होता हैं ।

• इस दुनिया में किया गया अधर्म (अशुभ कर्म) तत्काल फल नही देता जैसे कि बोई हुई पृथ्वी तत्काल फल नही देती लेकिन किया हुआ कुकर्म जब धीरे धीरे पक जाता हैं तो कर्ता की जड़ो तक को काट डालता हैं । अधर्म करने वाला पहले तो बढ़ता हैं, फलता फूलता हैं और खूब धन वैभव से युक्त होकर अपने ईर्ष्यालू शत्रुओं और प्रतिद्वन्दियों को भी जीत लेता हैं पर जब उसके किये कुकर्म फलित होते हैं तो उसे जड़ समेत नष्ट कर डालते हैं ।

• दिन में निकला हुआ चन्द्रमा शोभायमान नही होता भले ही पुर्ण चन्द्र हो, यौवन के बिना नारी का रूप शोभायमान नही होता भले ही कितनी सुन्दर हो, कमल पुष्पों के बिना सरोवर सूना लगता हैं भले ही कितना ही बड़ा हो, इसी प्रकार धनवान यदि कंजूस हो तो शोभायमान नही होता, सुन्दर पुरूष मूर्ख हो, सुन्दर नारी दुष्टा हो तो शोभायमान नही होते और बेरोजगार पति तथा मातृत्वहीन पत्नी - ये दोनो शोभायमान नही होते ।

• जिस मामले में जानकारी न हो तो उस विषय मे चुप रहना ही अच्छा होता हैं, बुरा बोलने से न बोलना अच्छा होता हैं । विद्वान की विद्वता और मूर्ख की मूर्खता बोलने से ही प्रकट होती हैं जैसे कौवा और कोयल का भेद बोलने पर ही प्रकट होता हैं । इसलिये विद्वान का बल वाणी और मूर्ख का बल मौन रहना होता हैं । या तो बुध्दीमान की तरह बोलो अन्यथा चुप रहो जैसे विवेक एंव विचार से शून्य होने से पशु चुप रहते हैं ।

• विद्या ऐक ऐसा धन हैं जिसे न तो कोई छीन सकता हैं, न चुरा सकता हैं और न ही नष्ट कर सकता हैं । यही ऐक ऐसा धन हैं जो खर्च करने से घटने के बजाय बढ़ता हैं । विद्या माता के समान पोषण करती हैं, पिता के समान संरक्षण करती हैं, दुख- विपति में पत्नी के समान धैर्य और उत्साह प्रदान कर दुख दूर करती हैं, विदेश में मित्र की तरह साथ देती हैं, चहुं ओर कीर्ती फैलाती हैं और बन्धु की तरह जीवन पर्यन्त साथ निभाती हैं ।

• सत्य आचरण, तप यानि द्वन्द सहन करना, ज्ञान अंहिसा यानि वैर भाव का त्याग, विद्वानो के प्रति विनम्रता रखना और शील युक्त श्रेष्ठ कर्म करना-जो इन गुणों को आचरण में धारण करता हैं, वही विद्वान हैं । केवल पाठ करने वाला ही विद्वान नही होता जैसे राम - राम बोलने वाला तोता भक्त नही होता, मछली की घात में ऐक टांग पर खड़ा रहने वाला बगला तपस्वी नही होता और मात्र भगवा वस्त्र पहनने, भभूत लगाने व केश दाढ़ी बढ़ा लेने से कोई साधु नही होता ।

• 'विद्या ददाति विनयं' के अनुसार विद्या से विनम्रता प्राप्त होती हैं । विद्या विद् धातु से बना शब्द हैं जिसका अर्थ होता हैं ज्ञान, जानना । विनम्रता के कार्य की सिध्दी होती हैं, अंहकार का नाश और यश की प्राप्ती होती हैं, ज्ञान से बुध्दीबल बढ़ता हैं, बुध्दीबल से मनुष्य की कार्यक्षमता बढ़ती हैं । बुध्दीबल के बिना मनूष्य मूढ़ होता हैं, अयोग्य होता हैं । विद्या और बुध्दी के बिना धन का भी उचित उपयोग नही हो सकता इसलिये विद्या और बुध्दी धन से भी श्रेष्ठ हैं ।

• यह बड़े मजे की बात हैं कि हम ऐक जमीन का टुकड़ा खरीद कर उस जगह अपने नाम का बोर्ड लगा देते हैं कि उस जमीन के मालिक हम हैं । उस बोर्ड को देखकर वह जमीन का टुकड़ा हंसता होगा क्योंकि उसने ऐसे कई बोर्ड लगते व उतरते देखे होगें । जब हम नही थे तब भी वह जमीन का टुकड़ा था, जब हम नही रहेगें तब भी वह जमीन का टुकड़ा रहेगा फिर भी हम इस गलतफहमी में रहते हैं कि हम उस जमीन के मालिक हैं ।

• बुध्दीमान को चाहिये कि रोग के लक्षण देखते ही जो भी उचित उपाय हो उसे शीघ्र कर रोग को समूल नष्ट करने का प्रयत्न करे, रोग पैदा करने व बढ़ाने वाला खान-पान और रहन सहन त्याग दें। जैसे मूर्ख व्यक्ति अपने शत्रु को नही पहचान पाता और धोखा खा जाता हैं उसी प्रकार मूर्ख व्यक्ति अज्ञानता, आलस्य और लापरवाही के कारण अपने शरीर में उत्पन्न हुऐ रोग को पहचान नही पाता लिहाजा अन्जाने ही रोग का शिकार हो जाता हैं ।

• पहले दुख भोगकर फिर सुख भोगना अच्छा हैं, पहले निर्धन हो फिर श्रम करके धवान होना अच्छा हैं, पैदल चलने के बाद सवारी पर बैठना अच्छा हैं, थोड़ी भूख सह कर उचित आहार लेना अच्छा हैं, संतानहीन होना अच्छा पर बुरी संतान का होना अच्छा नही, अन्यायपूर्वक धन कमाने की अपेक्षा फालतू खर्चो में कमी करना अच्छा हैं, मूर्ख मित्र की अपेक्षा बुध्दीमान शत्रु अच्छा हैं और प्रभु जिस हाल में रखे उसी में खुश रहना सबसे अच्छा ।

• ज्ञानी तत्व की खोज में रहता हैं, रोगी अच्छे वैद्य की खोज में रहता हैं, वैश्या धनवान ग्राहक की खोज में रहती हैं, बलवान से वैर करने वाला सहायक की खोज में रहता हैं, योगाभ्यासी एकान्त की खोज में रहता हैं । याचक दानदाता की, भयभीत रक्षक की, ठग मूर्खो की, पुलिस अपराधी की, अपराधी मौके की तथा दुष्ट व्यक्ति दूसरों को कष्ट पहुचाने के उपाय की खोज में रहता हैं और विद्यार्थी सिर्फ विद्या प्राप्त करने के लिये ज्ञान की खोज में रहता हैं ।

• कंहि आग लग जाये तो पानी से बुझाई जा सकती हैं, शरीर में कोई रोग हो तो उचित चिकित्सक से उसे दूर किया जा सकता हैं, छाता लगाकर धूप और वर्षा से बचाव किया जा सकता हैं, बलवान हाथी को भी महावत अंकुश से वश में कर लेता हैं, उचित मात्रा में युक्तिपुर्वक विष को भी औषधि की तरह प्रयोग किया जा सकता हैं, सोये हुऐ को जगाया जा सकता हैं पर जो जाग कर भी सोने का नाटक कर रहा हो उसे जगाना मुश्किल हैं ।

• 'विद्या ददाति विनयं' के अनुसार विद्यावान को विनम्र और विनयशील होना चाहिये, अंहकारी और शेखीबाज नही । यदि विद्या पाकर भी विनम्रता धारण की जाती तो विद्या प्राप्त करना निष्फल ही रहा। विद्यावान जितना ज्ञान प्राप्त करता हैं उतना ही वह यह समझता हैं कि बहुत कम जानता हैं और बहुत कुछ जानना बाकि हैं । जो अपने को बुध्दीमान समझे वह मूर्ख होता हैं ।

• खाना-पीना, सोना, भयभीत होना, और कामवासना का अनुभव करना - ये चारों काम मनुष्य और पशु समान रूप से करते हैं और इस दृष्टि से दोनो की प्रवृतियां ऐक समान हैं फिर भी दोनो में फर्क क्या हैं ? फर्क ये हैं कि मनुष्य में अपने कर्तव्य (धर्म) के पालन का विवेक होता हैं पर पशु में नही होता। यदि मनुष्य भी धर्म पालन और विवेक से रहित हो, तो फिर उसमें और पशु में कोई भेद नही रहेगा ।

• विद्वता, विद्या और विद्वान की कद्र विद्वान ही करते हैं । मूर्खो में विद्वान की दशा ऐसी होती हैं जैसे अन्धो के बीच किसी सुन्दरी की और नास्तिकों के बीच धर्म ग्रन्थ की । ऐक अन्धे पुरूष की पत्नी की व्यथा इस वाक्य से प्रकट होती है। कि 'सखी री, काहे को करूं में सिंगार पिया मोरे आन्धरे' । जैसे नेत्रहीन आखों से अन्धा होता हैं वैसे ही विवेकहीन व्यक्ति 'अक्ल का अन्धा' होता है। और भला बुरा नही देख पाता हैं ।